भारतीय इतिहास लेखन में वैदिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ

–डॉ. महेन्द्र पाठक
एसो0प्रो0 प्राचीन इतिहास विभाग
का.सु. साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय अयोध्या, अयोध्या (उ.प्र.)

अतीत से लगाव मानव का जन्मजात गुण होता है और यह लगाव प्राचीन भारत के लोगों में अतीत के प्रति जीवन्त चेतना थी। भारतीय सन्दर्भ में यद्यपि यह एक सांसारिक मानवीय, ऐतिहासिक अतीत बोध के रूप में विकसित नहीं हो पायी, तथापि इतिहास की एक वाचिक अथवा मौखिक परम्परा का दिग्दर्शन हमें वैदिक संहिता में मिलता है। इसका आरम्भिक अस्तित्व ऋग्वैदिक काल में अस्पष्ट एवं अव्यवस्थित रूप में अपनी उपस्थिति दर्शाता है। स्वतंत्र इतिहास की पुस्तकों का उनके मौलिक रूप में संरक्षण नहीं किया गया। अद्यतन विद्यमान इतिहास, जिसका संरक्षण परवर्ती काल खण्ड में किया गया, कदाचित वही आंशिक रूप से बचा रहा गया।[1] प्रो. पाठक की स्पष्ट स्थापना है कि इतिहास लेखन वैदिक युग से निरन्तर अद्यतन विद्यमान है।[2]

वैदिक काल में ज्ञान की समस्त धाराएं प्रायः मौखिक थी इतिहास भी इसी तरह था वह चाहे जिस रूप में रहा हो। नाराशंसी यह परंपरा उतरवर्ती चरणों में विशिष्टीकृत होती गई जैसे वंश, गाथा, नाराशंसी, दानस्तुति, आख्यान, इतिहास और पुराण का था दान स्तुति आख्यान इतिहास और पुराण। वंश पुरोहितों और शासकों की वंशावलियो की सूची उपलब्ध कराते हैं। प्रो पाण्डेय के मतानुसार गाथा, नाराशंसी और दान स्तुति राजकीय जननायकों तथा संरक्षकों की प्रशंसा से सम्पृक्त है। भारतीय इतिहास में राजा और गीत का अन्योन्याश्रित संबंध है। प्रारंभ में गाथा का अर्थ एक गीत होता था जो कालांतर में एक ज्ञान की विधा में परिवर्तित हो गया। शेष वेद गान के मंत्रों प्रार्थनाओं के संग्रह, कर्मकांड और विमर्श की पुस्तके हैं।[3] प्रो0 पाठक के मतानुसार प्राग्वैदिक काल में मात्र गाथा और नाराशंसी के स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होते हैं। ऋग्वेद कोई एकाश्म (Monolithic) रचना नहीं है, इसके परवर्ती पाठांतरो के साथ गाथा शब्द का उल्लेख मिलता है।[4] यहां एक भृग्वंगिरस समुदाय के कण्व शाखा के पुरोहितों के साथ संबंद्ध है। प्रोफेसर पाठक बताते हैं कि विश्वामित्रों के पूर्वज 'गाथिन' नामक साहित्यिक विधा से जुड़े थे।[5]

ऋग्वेद के सूक्तों में कतिपय मंत्र ऐसे हैं, जिन्हें 'दानस्तुति' कहा जाता है। इन दान स्तुतियों में ऋग्वैदिक कालीन राजाओं के प्रशस्त दान की स्तुति की गई है। ऋग्वेद में सर्वानुक्रमणी को पाकस्थामा कौरायण की दानस्तुति कहा गया है। कौरायण पद का अर्थ यद्यपि यास्क ने कृतयान किया है, जिसका अर्थ शत्रुओं के प्रति अभियान अथवा चढ़ाई करने से भी किया जाता है। यह अर्थ भी किसी राजा के सैनिक अभियान की ऐतिहासिकता की ओर संकेत करता है। इसी प्रकार अभ्यावर्ती चायमान की दानस्तुति सावर्णि की दानस्तुति, प्रकण्व की दानस्तुति, तथा अन्य दानस्तुतियाँ प्राचीन ऐतिहासिक साहित्य के रूप में विद्यमान थीं।

नाराशंसी का उल्लेख ऋग्वेद में विभिन्न संदर्भो में हुआ है।[6] इसका व्युत्तिपरक अर्थ 'नरों की प्रशंसा' या 'नरों के गौरव का गुणगान' है।[7] नाराशंसी को मृत पिताओं की उपासना से भी जोड़ा गया है। प्रो0 पाठक के मतानुसार इसका अर्थ सोमरस से परिपूर्ण पात्र के रूप में

ग्रहण किया गया प्रतीत होता है।[8] यहाँ यह भी जोड़ सकते हैं कि नाराशंसी का विकास इंद्र जैसे बलशाली नायकों की प्रशंसा में हुआ। क्या यह संयोग है कि 'इंद्र' के द्वारा वीरतापूर्ण कार्यो को पूर्ण करते समय, उसे सोमरस का पान करते दिखाया गया है।[9] ऐसा प्रतीत होता है कि कालांतर में इंद्र के वीरतापूर्ण कृत्यों का सादृश्य नृपों एवं सरदारों के कार्यो से वर्णन कर दिया गया होगा। जिस प्रकार वैदिक ऋचाओं को 'अपौरूषेय' कहा गया है, उसी प्रकार नाराशंसी को अपौरूषेय सिद्ध करने के लिए देवताओं को कवि कहा गया। अग्नि को कवि बताया गया है, जिसकी जिह्वा मधु की है।[10] देवताओं की कई कोटियाँ ऋग्वेद में मिलती है और देवताओं के उपर्युक्त रूप को ब्रह्मणस्पति या धार्मिक गायनों के देवता का नाम दिया गया।[11]

ध्यातव्य है कि ऋग्वैदिक समाज कोई समरूप समाज नहीं था। इस समाज के अपेक्षाकृत बौद्धिक लोगों ने प्रार्थनापरक मंत्रों की रचना की, जबकि इहलोकवादी लोगों ने गाथाओं तथा नाराशंसियों की रचना की। ऋग्वेद के सभी मण्डलों के एक गहन विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि धार्मिक तथा ऐतिहासिक प्रवृत्ति के बीच विभाजन स्पष्ट हो रहा था। रामशरण शर्मा[12] जैसे विद्वानों ने सुस्पष्ट किया है कि किस प्रकार ऋग्वैदिककाल से उत्तरवैदिककाल या ब्राह्मण ग्रंथों के काल में राजतंत्र की विचारधारा एवं कर्मकाण्डों में बदलाव आ रहे थे। इस समय राजसूय, अवश्मेध एवं बाजपेय यज्ञों का प्रचलन बढ़ता जा रहा था।[13] अब इतिहास और पुराण के साथ 'गाथा' का भी प्रतिदिन पाठ किए जाने वाली रचनाओं में शामिल कर लिया गया।[14] इन्हें विवाह के अवसर पर भी गाया जाने लगा।[15] ऐसा प्रतीत होता है कि इस समय 'विवाह' न केवल एक संस्कार था, बल्कि दो कुलों के बीच शक्तियों के एकत्रण या संतुलन का माध्यम भी था। बिंम्बिसार एवं अजातशत्रु से लेकर साम्राज्य भोगी गुप्तों के समय हुए वैवाहिक सम्बन्धों को इसी तरह देख सकते हैं। इन विवाहों की सिक्कों और अभिलेखों में एक लम्बी श्रृंखला दिखलाई पड़ती है। वास्तव में यह आज भी देखा जा सकता है, कि जब विवाह सम्बन्ध स्थापित हो रहे होते हैं, तो दानों पक्षों के लोग अपने–अपने पक्ष के पूर्व गौरव को बढ़ा–चढ़ाकर बता रहे होते हैं। उत्तरवैदिककाल में इतिहास गायकों का ऐसा ही वर्ग अस्तित्व में अवश्य रहा होगा। महिषियों तथा पट्टमहिषी[16] से घिरा राजा 'अश्वमेध यज्ञ' का सम्पादन करता था, तो इस समय यज्ञ के आगे बढ़ने के साथ–साथ, गाथाओं की रचना और पाठ जारी रहता था। ऐसा प्रावधान किया गया था, कि जिस दिन अश्व को छोड़ा जाएगा, उस दिन तक ब्राह्मण बाँसुरी वादक यजमान राजा के द्वारा दिए गए उपहारों का उल्लेख करते हुए स्वरचित तीन गाथाओं का गायन करता था।[17] ब्राह्मण ग्रंथों में जन्मेजय, परीक्षित[18] मरूत इक्ष्वाकु[19], क्रैव्य पांचाल[20] और दुष्यंत के पुत्र भरत[21] की गाथाएँ प्राप्त होती हैं। इसी प्रकार सूत्र साहित्य में दस नाराशंसियों की एक श्रृंखला प्राप्त होती है।[22]

इतिहास लेखन की परम्परा की एक धारा के रूप में 'आख्यान' वैदिककाल में अस्तित्व में आ चुके थे। निरूक्त[23] तथा वृहद्देवता के अनुसार ऋग्वेद की गई ऋचाएँ आख्यानों से मिलती हैं।[24] कई सुन्दर प्रेमकथाओं को आधार प्रदान करने वाली 'उर्वशी' और 'पुरूरवा' की प्रेमकथा शतपथ ब्राह्मण के आख्यानों में एक सुगठित रूप प्राप्त करती परिलक्षित होती है।[25] लेकिन इससे पहले ही एक ऋग्वेद में एक 'मर्त्य मानव' तथा 'अमर्त्य मानवी' के बीच पुष्पित होने वाली प्रेमकथा के रूप में अस्तित्व में आ चुकी थी।[26] यह निश्चित नही है कि ऋचाएँ जो कथोपकथन शैली में हैं, किसी वास्तविक नाटकीय आख्यान का प्रत्यक्ष अंश है। वास्तव में

संस्कृत नाटक का आरम्भ और वास्तविक नाटकों के बीच एक लम्बा अंतराल रहा प्रतीत होता है। नाटक का पूर्वतम् उल्लेख 'पतंजलि' के 'महाभाष्य' में पाया जा सकता है, जिसमें 'कंसवध' तथा 'बालिवध' के अभिनय की बात की गई है।[27] इस प्रकार हम पाते हैं कि एक लम्बी साहित्यिक परम्परा में अर्द्ध महाकाव्य एवं अर्द्ध नाटक वाला आख्यान साहित्य अस्तित्व में आ गया था।[28]

यदि हम गाथा और नाराशंसी तथा आख्यानों की विषयवस्तु का तुलनात्मक अध्ययन करें तो, पाएँगे कि 'गाथा' और 'नाराशंसी' में वीरत्वव्यंजक छवियों को प्रस्तुत किया जा रहा था, जबकि आख्यानों में प्रायः सांस्कृतिक पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित किया गया। शतपथ ब्राह्मण में वर्णित 'विदेहमाधव' द्वारा जंगलों के जलाने को कृषि कर्म के गंगाघाटी में प्रसार के रूप में देखा गया है। इस आख्यान की ओर ध्यान 1850 में अलब्रेख्त बेबर ने अपनी पत्रिका 'इंडिश स्टुडियन' के पहले भाग में आकृष्ट किया था।[29] इस आख्यान में हमें ऋग्वैदिक जनों तथा गंगा घाटी के मूल निवासियों में एक सांस्कृतिक अंतर्क्रिया की झलक मिलती है।

सामान्यतः आख्यान का अर्थ– ऐतिहासिक वर्णन होता है। शतपथ ब्राह्मण, आख्यान और इतिहास में भेद करता है।[30] कालान्तर में निरूक्त[31] परम्परा में भी यह भेद विद्यमान रहा। धीरे–धीरे आख्यानों को इतिहास–पुराण की परम्परा में शामिल कर लिया गया।[32] कदाचित इसी उद्देश्य से अर्थशास्त्र[33] के रचनाकार ने आख्यायिका को इतिहास का संघटक अंग माना है।

वर्तमान में 'इतिहास' शब्द की परिभाषा को हम व्यापक अर्थो में ले रहे हैं। आज इतिहास को 'अतीत' और 'वर्तमान' के बीच एक अंतहीन संवाद[34] या मानव जीवन में हुए परिवर्तनों की गाथा के अनुरेखण के रूप में दिखा जाता है।

आरम्भिक भारतीय साहित्य में 'इतिहास' का यह अर्थ नहीं था। आरम्भ में इसका सामान्य अर्थ 'पुरावृत्त' या 'प्राचीन घटना' से सम्बन्धित था।[35] निरूक्त तथा वृहद्देवता में यही अर्थ बताया गया है।[36] यास्क बताते हैं कि ''वहाँ वे एक इतिहास सुनाते हैं।''[37] उत्तरवैदिक काल में इतिहास के इस अर्थ में परिवर्तन हुआ और अथर्ववेद[38] तथा ब्राह्मण ग्रन्थों[39] में इतिहास का अर्थ हो गया–वस्तुतः इस प्रकार ऐसा हुआ था। इतिहास का यह अर्थ एक लम्बे समय तक बना रहा है।

इस प्रकार इतिहास लेखन निरन्तर चलने वाली एक प्रक्रिया है। अतीत एवं वर्तमान के मध्य निरन्तरता को बनाये रखने के लिए इतिहास एक प्रभावशाली माध्यम है। भारतीय इतिहास दर्शन के सन्दर्भ में इसकी सहायता से ही मानव समाज के विविध पक्षों जैसे– समाज, धर्म, संस्कृति, राजनीतिक अथवा ज्ञान की अन्य विधा आदि के विषय में सम्यक ज्ञान एवं दृष्टि का निर्माण होता रहता है। भारतीय इतिहास दर्शन एवं लेखन की अवधारणा सम्प्रति नवीन अनुसंधानो और प्रविधियों से अनुशासित हो रही है। वाचस्पत्य[40] में सन्दर्भित है–

धर्मार्थ काम मोक्षाणाम उपदेश समन्वित। पूर्ववृत्तं कथायुक्तमितिहास प्रचक्षते।।

फूलों में महक की भांति इतिहास विभिन्न मानव विचार संग्रहों में अन्तर्निहित है जिसे सांस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों के साथ देखने की आवश्यता है। वस्तुतः इतिहास सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में अतीत का निष्पक्ष वर्णन है।

सन्दर्भ–सूची :

1. वार्डर, ए0के0; भारतीय इतिहास लेखन की भूमिका (अनुदित) वैदिक इतिहास लेखन, पृष्ठ–16–17
2. पाठक, प्रो0वी0एस0,ऐन्श्येन्ट हिस्टोरियंस आफ इण्डिया, 1966, अध्याय–प्रथम

3. पाण्डेय, प्रो0 जी0सी0, इतिहासः स्वरूप एवं सिद्धान्त, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 1988, पृ063
4. पाठक, विश्वंभरशरण, भारत के प्राचीन इतिहासकार, 2007 ग्रन्थ शिल्पी, नई दिल्ली, पृ023
5. पाठक, यथोपरि, पृ023
6. ऋग्वेद IX 86-42;X, 63.3;II, 34.6 प्रो. पाठक के मतानुसार यह अवेस्ता के नैरयोएंह से विमर्श के योग्य है।
7. येन नराह प्रशस्यंते स नारशंसो मंत्राः, निरूक्त 9.9
8. ऐतरेय ब्राह्मण, II, 33
9. बाशम, ए0एल0, अद्भुत भारत, पृ0 286–88, आगरा, 1972
10. ऋग्वेद I. 13.3
11. तत्रैव X. 85–6
12. शर्मा, रामशरण, प्राचीन भारत में राजनीतिक विचार एवं संस्थाएं, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1990
13. थापर, रोमिला, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, ग्रन्थ शिल्पी, नई दिल्ली, 2001
14. शतपथ ब्राह्मण, XI.6.6.8
15. मैत्रायणी संहिता, III 7.31
16. शर्मा, रामशरण, यथोपरि।
17. शतपथ ब्राह्मण, XIII 4.2
18. ऐतरेय ब्राह्मण, VIII, 21, शतपथ, XIII 5.4.2 परिक्षित की गाथा और उसकी ऐतिहासिक पर एक मंत्रमुग्ध कर देने वाले अध्ययन के लिए प्रो0 हेमचन्द्र राय चौधरी ने पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव ऐशिएंट इण्डिया, देखिए (2006 संस्करण, नई दिल्ली)
19. ऐतरेय ब्राह्मण VIII 21
20. शतपथ ब्राह्मण VIII 5.4.7
21. ऐतरेय ब्राह्मण VIII 23
22. आश्वलायन गृहसूत्र, I. 14.6–7
23. निरूक्त–II, 19, 24, X. 26, XII. 10
24. बृहद्देवता, III–156; IV, 46; VI, 107, 109; VIII.10
25. श्रीमाली , के0एम0, धर्म विचारधारा और समाज, पृ0 210, ग्रंथ शिल्पी, नई दिल्ली, 2005 एवं और भी देखिए, बाशम, ए0एल0, अद्भुत भारत, (अनु0 बेंकटेशन पाण्डेय), आगरा, 1972
26. बाशम, एम0एल0 यथोपरि।
27. चोपड़ा, पी0एन0, पुरी, बी0एन0; दास, एम0एन0; भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृ0 192, मैकमिलन प्रकाशन, नई दिल्ली, 1975
28. पाठक, बी0एस0, यथोपरि, पृ0 25
29. श्रीमाली, के0एम0, यथोपरि, पृ0 210 एवं टिप्पणी सं0 90
30. शतपथ ब्राह्मण, XI 1.6.9
31. श्रीमती, के0एम0, धर्म, समाज और संस्कृत, ग्रन्थ शिल्पी, नई दिल्ली, 2005
32. पाठक, बी0एस0, यथोपरि, पृ0 25
33. कौटिल्य, अर्थशास्त्र 1.4
34. कार, ई0एच0, इतिहास क्या है? मैकमिलन, नई दिल्ली, 1999
35. पाठक, बी0एस0, यथोपरि, पृ0 25
36. बृहद्देवता, IV, 46
37. पाठक, बी0एस0, यथोपरि में अध्याय 1 की टिप्पणी 60 देखिए
38. अथर्ववेद, XV 6.4
39. शतपथ ब्राह्मण, XIII 4.3.12.13, गोपथ I 21; तैत्तिरीय ब्राह्मण II, 9–11